# नालन्दा पर गिद्ध

देवेन्द्र

बनारस विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष आचार्य चूड़ामणि प्राचीन परम्परा के संरचनावादी समीक्षक थे। मनु महाराज के वर्ण विभाजन और स्त्री सम्बन्धी आग्रह आदि में उनकी अटूट आस्था थी। अनेक विश्वविद्यालयों की पाठ्यक्रम समिति के प्रभावी सदस्य, थीसिसों के परीक्षक, हिन्दी के प्रसार और विकास के लिए स्थापित अनेक संस्थाओं के संरक्षक और खुद अपने विश्वविद्यालय में 'डीन ऑफ स्टूडेन्ट्स' जैसे महत्वपूर्ण पदों की जिम्मेवारियाँ सँभाले हुए व्यस्त रहा करते थे। एक कैबिनेट मंत्री की थीसिस उन्होंने खुद लिखायी थी। शहर के मेयर और शराब के ठेकेदार मनोहर जायसवाल की पुत्रवधू उन्हीं के निर्देशन में शोध कर रही थीं। उनका व्यक्तित्व एक ऐसे वटवृक्ष की तरह था जिसने अपनी मूल जमीन की सारी उर्वराशक्ति को सोखकर उसे बन्ध्या कर दिया था। जिसके कोटरों में साँप, चमगादड़, नेवले और गिरगिट सुख चैन से रह रहे थे। जिसकी उन्नत शाखाओं पर बैठे गिद्ध हर क्षण मृत्यु की टोह में दूर टकटकी लगाये रहते। विश्वविद्यालय में नियम था कि कोई प्रोफेसर दो साल से ज्यादा विभागाध्यक्ष के पद पर नहीं रहेगा। लेकिन आचार्य चूड़ामणि के दरबार में सारे नियम कानून पायदान की तरह बिछे रहते। कीचड़ और गन्दगी पोंछने के काम आते थे सारे नियम और कानून।

सुबहे बनारस! पंचगंगाघाट की सीढ़ियों पर हो या ठठेरी बाजार की सँकरी गलियों में। चाहे जहाँ हो। उसके अस्त का उत्सव आचार्य चूड़ामणि के दरबार में ही धूमधाम से सम्पन्न होता। आर.एस.एस. और विद्यार्थी परिषद के सारे नेता जमा होते। विश्वविद्यालय के एक एक विभाग और एक एक व्यक्ति के बारे में वे सारी सूचनाएँ सौंपकर मन्त्रणादान पाया करते थे। आचार्य उतने बड़े संगठन के गॉडफादर थे। कहा जाता है कि विश्वविद्यालय के उस सिंहपीठ पर रहते हुए चूड़ामणि जी ने कश्मीर से कन्याकुमारी और असम से गुजरात तक के हिन्दी विभागों को अपने प्रभामंडल से आच्छादित कर रखा था। विभागाध्यक्षों और प्रोफेसरों के अलावा नये

लेक्चरर और चपरासियों तक की नियुक्ति उन्हीं की मरजी से होती थी। ‘‘तेरी सत्ता के बिना हे प्रभु मंगल मूल, पत्ता तक हिलता नहीं...’’

वे अस्सी के दशक के प्रारम्भिक वर्ष थे। तब ‘ग्लासनोस्त’ और ‘पेरोस्त्रोइका’ जैसी घटनाएँ सोवियत रूस में नहीं हुई थीं। ‘पार्टी हेडक्वार्टर’ को ध्वस्त करने की सांस्कृतिक क्रान्ति की अपील का उत्साह था। पद, प्रतिष्ठा, उम्र और अनुभव आदि की दुहाई देकर कौन इतिहास का रास्ता रोक रहा है? उसकी खोज करो!

विश्वविद्यालयों में माक्र्सवादी विचारधारा और वामपन्थी अश्वमेध का घोड़ा कालिदास, भवभूति, तुलसी और बिहारी के बाद मैथिलीशरण गुप्त तक को रौंदता, किसी कालातीत सौन्दर्यशास्त्र के लिए भागता चला जा रहा था। अस्सी के दशक के उन शुरुआती वर्षों में आचार्य चूड़ामणि जितना क्षुब्ध, दुःखी, उदास और आहत रहा करते थे उतना पहले कभी नहीं। रूखे चेहरे, बढ़ी दाढ़ी, धँसी आँखों पर चश्मा लगाये बड़े छोटे का सारा लिहाज छोड़कर बहस करते, सिगरेट पीते इस नयी वामपन्थी प्रजाति को देखकर वे वाकई बहुत खिन्न रहा करते थे। साम और दाम! एक दिन जब उन्होंने जलेश्वर से कहा कि तुम बहुत योग्य और होनहार लड़के हो तो वह बेशर्मों की तरह हँसने लगा- ‘‘लेकिन मुझे नौकरी नहीं करनी है...और आप मुझे बेवजह दाना डाल रहे हैं। मैं यहाँ पार्टी का काम करने आया हूँ।’’

वह महेश्वर की पार्टी का सक्रिय सदस्य और उसी का छोटा भाई था। महेश्वर के बारे में किंवदन्ती थी कि एक बार नेपाल के एक पहाड़ी ढाबे पर जाड़े की सुबह गरम गरम जलेबी और दही खाते हुए वह एक बूढ़े आदमी से बेतरह उलझ गया। बूढ़ा आदमी बार बार कुछ कहना चाहता था, लेकिन उसे इसका अवसर नहीं मिल रहा था। महेश्वर ने उसे बताया कि थोड़ा गाँवों में लोगों के बीच जाकर आप उनके अनुभवों से भी सीखें। बूढ़ा थक हार कर उठा और चला गया। बाद में ढाबे के नौकर ने बताया कि ये चीन के चेयरमैन माओ-त्से-तुंग थे। आगे महेश्वर ने जो कुछ कहा और किया वह किंवदन्ती में नहीं है। जलेश्वर उसी महेश्वर का

छोटा भाई था। दिन में नुक्कड़ नाटक करता। कविताएँ रचता। और रात भर जागकर शहर की दीवारों पर नारे लिखा करता था। विश्वविद्यालय में उसकी अपनी मण्डली थी, जो हमेशा चुनौती देती थी। साहित्य, कला, संस्कृति और इतिहास पर बहस करती थी। और अन्त में वही करती और कहती थी जो महेश्वर उसे चिट्ठी में लिखकर बताता था।

आचार्य चूड़ामणि जी के योग्य शिष्य सुबोध मिसिर यूँ तो शान्त स्वभाव के गम्भीर व्यक्ति थे। लेकिन अपने गुरुदेव के अपमान और क्षोभ को देखकर उन्होंने चुपचाप कमर कसी। फिर तो माक्र्सवादी अश्वमेध का जो घोड़ा सबको रौंदता चला जा रहा था, एक दिन उसकी लगाम पकड़ ली गयी। शास्त्रार्थ की कई परम्पराएँ शुरू हुईं। मशीनी नतीजे और जड़ आस्थाएँ एक दूसरे से टकराने लगीं। एक तरफ कबीर, प्रेमचंद, निराला और मुक्तिबोध थे तो दूसरी ओर तुलसीदास, आचार्य शुक्ल और हजारीप्रसाद द्विवेदी। जाहिलों और जातिवादियों का संगठन आर.एस.एस. सुबोध मिसिर जैसे जहीन, पढ़ाकू और संयमित व्यक्ति का संसर्ग पाकर नयी जीवनी शक्ति से भर गया। अपनी वेशभूषा और रहन सहन में वे शुद्ध रूप से देहाती थे। कुर्ता, पाजामा और चप्पल के अलावा कभी कभार उनके कन्धे पर सफेद गमछा पड़ा होता था। अकसर सामने वाला उन्हें देखकर धोखा खा जाता। सुर्ती खाने के अलावा और कोई व्यसन उन्हें छू न सका था। स्त्रियों के बारे में उनके वही विचार थे जो कवियों के बारे में प्लेटो के। कल्पनाओं के फितूर और वाहियात के सपनों में उनकी कोई रुचि नहीं थी। उनका ज्यादातर समय पुस्तकालय में बीतता था। और शाम को नियमित गुरुदेव आचार्य चूड़ामणि के दरबार में जाकर चरण स्पर्श करते। उन दिनों गुरुदेव का इकलौता श्रवणकुमार एम.ए. अन्तिम वर्ष हिन्दी से कर रहा था। कभी फुर्सत में सुबोध मिसिर उसे घण्टों पढ़ाया करते। उन्हें इस बात का मन ही मन अफसोस था कि गुरुदेव का पुत्र होनहार नहीं है बल्कि एकदम मूर्ख और बोदा।

वह बनारस विश्वविद्यालय का नवजागरण काल था। नये नये लेक्चरर, वृद्ध रीडर और प्रोफेसर से लेकर क्लर्क शर्माजी और चपरासी रामदीन तक, सबके साले साली, बेटे, बहू, दामाद और